एमपीएस–001 : राजनीतिक सिद्धान्त
(अध्यापक जाँच सत्रीय कार्य)

सत्रीय कार्य कोड

किन्ही पाँच प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों (प्रत्येक) में दीजिए। प्रत्येक भाग से कम से कम दो प्रश्नों के उत्तर दीजिए। प्रत्येक प्रश्न 20 अंक का है।

भाग – I

1. आधुनिक राजनीतिक सिद्धान्त पर एक लेख लिखिए।

2. जॉन रॉल्स के न्याय सिद्धान्त को आकार प्रदान (configure) कीजिए।

3. उदारवादी चिंतन में दायित्व और अधिकारों के अंतःसंबंध का परीक्षण कीजिए।

4. राज्य के मार्क्सवादी दृष्टिकोण की चर्चा कीजिए।

5. नागरिकता की संकल्पना के विकास को रेखांकित कीजिए।

भाग – II

निम्नलिखित पर लगभग 250 शब्दों (प्रत्येक) में संक्षिप्त लेख लिखिए।

6. क) फासीवादी विश्व दृष्टि
   ख) जेंडर–लिंग विभेद

7. क) सविनय अवज्ञा
   ख) कड़ी का सबसे कमजोर जोड़ (वी. आई. लेनिन)

8. क) रूढ़िवाद
   ख) वैश्वीकृत विश्व मे राजनीतिक सिद्धान्त

9. क) नव–उदारवादी विचारधारा
   ख) सर्वहारा वर्ग की तानाशाही

10. क) व्यक्तिवाद
    ख) अलगाववाद

MPS-004 राजनीतिक सिद्धांत

प्रश्न-1 आधुनिक राजनीतिक सिद्धांत पर एक लेख लिखिए

उ०-1 राजनीति के विविध पक्षों के अस्तित्व एवं वैज्ञानिक अध्ययन को राजनीतिक सिद्धांत कहा जाता है। राजनीति के लिए प्रयुक्त शब्द Politics की उत्पत्ति ग्रीक भाषा के तीन शब्दों 'Polis' (नगर-राज्य), Polity (शासन) तथा Politia संविधान से हुई है।

इस अर्थ में राजनीति नगर-राज्य तथा उसके प्रशासन का व्यवहारिक एवं दार्शनिक धरातल पर अध्ययन प्रस्तुत करती है। राजनीति को Polis नाम प्रसिद्ध ग्रीक विचारक अरस्तू द्वारा दिया गया है। उन्हें राजनीति विज्ञान के पिता कहा जाता है।

* आधुनिक अर्थ में राजनीति शब्द को इन व्यापक अर्थों में प्रयुक्त नहीं किया जाता। आधुनिक समय में इसका संबंध राज्य, सरकार, प्रशासन, व्यवस्था के तहत समाज के विविध संदर्भों व संबंधों के व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध ज्ञान एवं अध्ययन से है।

आधुनिक राजनीति विचारकों में चार्ल्स मैरियम, रॉबर्ट डहल, लासवेल, कैटलिन, मैक्सवेबर, लास्की, मैकाइवर का नाम उल्लेखनीय है।

राजनीतिक सिद्धांत मे "सिद्धांत" के लिए अंग्रेजी शब्द (Theory) की उत्पत्ति यूनानी शब्द 'Theoria' से हुई है, जिसका अर्थ है "समझने के विशिष्ट दृष्टिकोण"। इस प्रकार राजनीतिक सिद्धांत का अभिप्राय राजनीति और उससे संबंधित समस्याओं का विभिन्न तथ्यों के आधार पर व्याख्या प्रस्तुत करने से है।

* आधुनिक राजनीतिक सिद्धांत (Modern Political Theory)

इसमे तथ्यों एवं विज्ञान का बोलबाला है इसका विकास दूसरे विश्व युद्ध के बाद हुआ। आधुनिक राजनीतिक सिद्धांत के विकास मे रॉबर्ट डहल, चार्ल्स मेरियम, कैथलीन, लॉसवेल, पिनॉक, डेविड ईस्टन आदि विद्वानों ने भूमिका अदा की है।

- अनुभव के उपागम
- व्यवहारवादी उपागम
- उत्तर व्यवहारवादी

→ आधुनिक दृष्टिकोण (Modern Approach of political Theory)

पारंपरिक दृष्टिकोण की मदद से राजनीति का अध्ययन करने के बाद राजनीतिक विचारकों को पारंपरिक दृष्टिकोण मे कुछ कमी नजर आई जिनसे वह राजनीति को नये दृष्टिकोण से अध्ययन करने की जरूरत महसूस हुई। इस प्रकार पारंपरिक ~~दृष्ट~~ दृष्टिकोण की कमियों को कम करने के लिए, इन नए दृष्टिकोणों को राजनीति विज्ञान के अध्ययन के लिए "आधुनिक दृष्टिकोण" के आधार पर इन्होंने

इसे परिवर्तन किया। वे राजनीतिक घटनाओं के तथ्यात्मक अध्ययन पर जोर देते हैं और वैज्ञानिक और निश्चित निष्कर्ष पर पहुंचने की कोशिश करते हैं। आधुनिक दृष्टिकोण का उद्देश्य आदर्शवाद को साम्राज्यवाद में बदलना है।

आधुनिक दृष्टिकोण के लक्षण (Characteristics of Modern Approaches)

ये दृष्टिकोण अनुभव जन्य डेटा से निष्कर्ष निकालने की कोशिश करते हैं।

ये दृष्टिकोण राजनीतिक संरचनाओं और इसके ऐतिहासिक विश्लेषण के अध्ययन से परे हैं।

आधुनिक दृष्टिकोण अंतर-अनुशासनात्मक अध्ययन में विश्वास करते हैं।

वे अध्ययन के वैज्ञानिक तरीकों पर जोर देते हैं और राजनीति विज्ञान में वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालने का प्रयास करते हैं।

⇒ आधुनिक दृष्टिकोण में समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण, मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण, आर्थिक दृष्टिकोण, मानात्मक दृष्टिकोण, सिमुलेशन दृष्टिकोण, प्रणाली दृष्टिकोण, व्यवहार दृष्टिकोण और मार्क्सवादी दृष्टिकोण शामिल हैं।

* आधुनिक राजनीति सिद्धांत को निम्न तथ्यों से समझ सकते हैं।

=> आधुनिक राजनीति-सिद्धांत में बहुत कुछ शामिल होता है जैसे की संस्थानिक-व्यावहारिक, वैज्ञानिक प्रत्यक्षवाद संबंधी, आनुभविक, व्यवहारिक, व्यवहारोत्तर एवं मार्क्सवादी बीसवीं सदी के वृहत्तर भाग पर ये प्रवृत्तियाँ हावी थीं

=> व्यापक राजनीति सिद्धांत आमतौर पर मीमांसात्मक (Philosophical) नियामक (Normative) आदर्शवादी और काफी हद तक ऐतिहासिक था।

=> दूसरी ओर आधुनिक राजनीतिक-सिद्धांत को दो परस्पर-विरोधी वर्गों में विभाजित किया जा सकता है; एक ओर उदारवादी, जिसमें व्यक्तिवादी, संभ्रांत वर्गवादी व बहुवादी आते हैं।

=> दूसरी ओर, मार्क्सवादी, जिसमें द्वंद्वात्मक भौतिकवादी अथवा अन्य शामिल हैं।

=> आधुनिक राजनीति सिद्धांत ने 15वीं-16वीं शताब्दियों से उदारवादी दृष्टिकोण से प्रारंभ कर और बाद में स्वयं को संस्थानिक, प्रत्यक्षवादी-आनुभविक व्यवहारिक व व्यवहारोत्तर Trend में ढलाया।

=> उनके पक्षधर, मैरियम व की से लेकर डाल, कैसवेल व ईस्टन तक थे।

* इसके अभिलक्षण निम्न प्रकार से सारबद्ध किए जा सकते हैं:

1) तथ्य व आँकड़े अध्ययन हेतु आधार तैयार करते हैं। ये संचित किए जाते हैं, स-पुष्ट किए जाते हैं और तब प्राक्कल्पना परीक्षण हेतु प्रयोग किए जाते हैं।

2) मानव व्यवहारों का अध्ययन किया जा सकता है, और मानव व्यवहार की नियमितताएँ सामान्यीकरण में अभिव्यक्त की जा सकती है।

3) तथ्यों व मूल्यों को अलग किया जाता है कि तथ्य वस्तुनिष्ठ हो जाए।

4) कार्य प्रणाली को आत्म सचेत, सुव्यक्त और परिमाणात्मक होना पड़ता है।

5) "यह जो है" को "यह जो था" अथवा "यह जो होना चाहिए या हो सकता था" की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण समझा जाता है।

6) आधुनिक राजनीति सिद्धांत के दूसरे छोर पर खड़ा है मार्क्सवादी - सिद्धांत जिसे द्वंद्वात्मक भौतिकवादी अथवा वैज्ञानिक समाजवादी सिद्धांत भी कहा जाता है।

7) यह एक ऐसा सिद्धांत है जो सामाजिक व राजनीतिक परिवर्तन का विश्लेषण व व्याख्या करने हेतु एक व्यवस्थापक व वैज्ञानिक ढाँचा

प्रदान करता है। यह अतीत की व्याख्या करने वर्तमान को समझने तथा भविष्य की संकल्पना करने का तरीका है।

प्रश्न 5 नागरिकता की संकल्पना के विकास को रेखांकित कीजिए?

उत्तर 5 प्रस्तावना :- एक विशिष्ट संबंध, जिसे लोग आमतौर पर सार्वजनिक जीवन में सापेक्षतः बराबरी का दर्जा देते हैं और अधिकार व विशेषाधिकार जो वह प्रदान करता है तथा कर्तव्य व बाध्यताएँ जो उससे जन्म लेती हैं पर अतीत में ध्यान दिया गया है और अनेक समाजों में उसे अभिव्यक्ति दी गई है। कुछ समाज जैसे यूनानी रोमन तथा मध्यकालीन यूरोप के शहर-राज्य इस संबंध को निश्चयात्मक कानूनी एवं राजनीतिक अभिव्यक्ति प्रदान करते थे। आधुनिक उदारवादी राज्यों के उदय के साथ ही नागरिकता, जो किसी राज्य व्यवस्था के स्थायी निवासियों के एक छोटे से भाग तक ही सीमित थी, की माँग होने लगी और इस प्रकार के राज्यों के भीतर आबादी के वृहद से वृहत्तर हिस्सों तक उत्तरोत्तर फैल गई।

आज हर व्यक्ति किसी न किसी राज्य का नागरिक है और वहाँ पर भी जहाँ पर नागरिकता वाग्वितण्डा में उलझी है। अनेक अंतर्राष्ट्रीय व घरेलू प्रावधान मौलिक अधिकारों व बाध्यताओं का अल्प परिमाण सुनिश्चित करते हैं। जबकि नागरिकता हकदारी सार्वभौमिक हो चुकी है।

Writo-Line

उन मानदंडों के संबंध में असुलझे संघर्ष हैं। जिन्हें नागरिकता हेतु दावेदारों के अन्तर्वेशन और बहिष्करण को सूचित करना चाहिए वह अधिकार व संसाधन हैं जो उसके पास होने चाहिए और व कर्तव्य बाध्यताएँ हैं जिनकी नागरिक से अपेक्षा की जाती है।

महत्व - नागरिकता की बढ़ती महत्ता ने इस धारणा से जुड़ी सैद्धांतिक अधिगता को स्थिर अवस्था में नहीं रखा है। ब्रायन टर्नर ने सामाजिक आंदोलनों और वर्ग संघर्षों तथा पौरत्व पहचान के बीच संबंध तलाश किए। कुछ ऐसे लेखक हैं जिनका तर्क है की नागरिक अधिकार अनेक मौलिक रूप में सुसज्जित संस्थानाओं से निकट से जुड़े हुए हैं। जानस्की नागरिक अधिकारों और उनकी अनिवार्यता के व्यापक संबंध तथा इन दोनों से संबंधित सूक्ष्म अध्ययन न किए जाने का पछतावा करते हैं। हाल के वर्षों में नागरिकता को समूह पहचान के साथ जोड़ने और व्यक्ति के अधिकारों के आधार पर नागरिकता की धारणा के प्रतिकूल नागरिकता की समूह प्रथकीकृत धारणा के संरक्षण के लिए बड़े प्रयास किए गए हैं। आज आधुनिक प्रजातंत्र के स्वास्थ्य और उसकी स्थिरता के लिए नागरिकों की गुणवत्ताओं और दृष्टिकोण का अधिक बेहतर मूल्यांकन हुआ है। उनकी पहचान में जो और उनके

क्षेत्रीय, प्रजातीय, धार्मिक और राष्ट्रीय पहचाना से संबोधित जटिल और बहुवादी प्रजातंत्रों में राजनीतिक स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए बहुत आवश्यक है। कुछ गुणात्मक जैसे सहिष्णुता की क्षमता तथा दूसरा जो एकदम भिन्न है के साथ कार्य करना सफल प्रजातंत्र के महत्वपूर्ण घटक है।

आज पहले के मुकाबले इस बात पर अधिक सहमति है की मात्र संस्थापनात्मक और क्रिया विधिक युक्तियाँ जैसे शक्तियों का विभाजन द्वि-सदनीय विधायिका और संघवाद राजतंत्र के स्वरूप एवम् सत्यनिष्ठा को सुनिश्चित नहीं करेंगे। इस प्रयोजन के लिए मानवीय गुण और लोकभावना जो नागरिकता के अन्य अंग है अपेक्षित है।

* नागरिकता की संकल्पना

नागरिकता की अनेक परिभाषाएँ हैं। यह विभिन्न परिपेक्ष्यों से भी प्राप्त हुई है। अस्थताई तौर पर हम नागरिकता को कतिपय जैसे अधिकारों और दायित्वों वाले राजनीतिक समुदाय की सदस्यता के रूप में मान सकते है। जो जन सामान्य में व्यापक रूप से व्याप्त और आबंटित है। सदस्यता सक्रिय और तटस्थ है दोनों प्रकार की होती है जिसे नागरिक ग्रहण करते है

भाग - 2

प्र० 6 (क) फासीवादी विश्व दृष्टि

(ख) जेंडर लिंग विभेद

उ० 6 (क) फासीवादी विश्व दृष्टि :- फासीवादी एक प्रकार का दूर-दराज, सत्तावादी अल्ट्रानेशनलवाद हो सकता है जो तानाशाही शक्ति, विपक्ष के जबरन दमन और शक्तिशाली इंजीनियरिंग फासीवादी समाज और अर्थव्यवस्था के विश्व दृष्टिकोण की विशेषता है जो 20वीं शताब्दी से शुरुआती यूरोप में प्रमुखता से आया था। अन्य यूरोपीय देशों में फैलने से पहले, प्रथम युद्ध के दौरान इटली में प्राथमिक फासीवादी आंदोलन उभरे। उदारवाद, मार्क्सवाद और अराजकतावाद के खिलाफ फासीवादी विश्व दृष्टिकोण, फासीवाद को सामान्य दाएं-बाएं स्पेक्ट्रम के भीतर सबसे दाईं ओर रखा गया है

फासीवादियों ने युद्ध को एक क्रांति के रूप में देखा, जिसने युद्ध, समाज, राज्य और प्रौद्योगिकी के चरित्र में बड़े पैमाने पर बदलाव लाए, कुल युद्ध का आगमन और इसलिए समाज की कुल सामूहिक लामबंदी ने नागरिकों और लड़ाकों के बीच अपकृष्टता को कमजोर कर दिया। फासीवादी विश्व दृष्टि एक "सैन्य नागरिकता" उत्पन्न हुई, जिसके दौरान युद्ध के दौरान सभी नागरिक, किसी न किसी तरह से सेना में शामिल थे।

Writo-Line

फासीवादी विश्व दृष्टिकोण युद्ध का परिणाम एक मजबूत राज्य के उदय के रूप में हुआ था, जो कई लोगों को अतीत की पूर्ति में सेवा करने और उन्हें समर्थन देने के लिए आर्थिक उत्पादन और रसद प्रदान करने में सक्षम था, साथ ही नागरिकों के जीवन में हस्तक्षेप करने के लिए अभूतपूर्व अधिकार भी था। फासीवादी विश्वदृष्टि फासीवादियों का मानना है कि उदार लोकतन्त्र अप्रचलित है और एक अधिनायकवादी राज्य के तहत समाज की संपूर्ण लामबंदी को सशस्त्र संघर्ष के लिए एक राष्ट्र को संगठित करने और आर्थिक कठिनाइयों का प्रभावी ढंग से जवाब देने के लिए आवश्यक मानता है।

फासीवादी विश्व दृष्टिकोण, फासीवाद इस दावे को खारिज करता है की हिंसा प्रकृति में स्वतः नकारात्मक है और राजनीतिक हिंसा, युद्ध और साम्राज्यवाद को राष्ट्रीय कायाकल्प करने में सक्षम साधन के रूप में देखता है फासीवादी संरक्षणवादी और हस्तक्षेप वादी आर्थिक नीतियों के माध्यम से निरंकुशता साफ करने के प्रमुख लक्ष्य के साथ एक अर्थव्यवस्था की वकालत करते हैं।

(2a) | जेंडर लिंग विभेद | अर्थशास्त्र का विकास नारी के विकास किये बिना संभव नहीं है। इतिहास इस बात का गवाह है कि जब कभी पुरुष प्रधान सभ्यता से नारी जाति की अवहेलना की, समाज का विकास बाधित हुआ, उसका पतन हुआ, किन्तु जब नारी जाति को मान सम्मान दिया गया उसे प्रेरणा व स्फूर्तिदायिनी जगजननी का स्थान दिया गया, तब समाज का विकास उल्लेखनीय रहा।

अर्थात महिलाओं की स्थिती को हमेशा एक समान नहीं समझा गया। एक ओर जहां 'यत्र नार्यः पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता' अथवा 'यदि ईश्वर प्रकाश पुंज है तो नारी उसकी किरण है जो प्रकाश को चारों ओर बिखेर देती है' अथवा 'यदि ईश्वर शब्द है तो उसका अर्थ है जैसी उक्तियां प्रचलित हैं, वहीं दूसरी ओर नारी के पालन पोषण को पड़ोसी के पौधे को सींचने के समान बताया गया।

उसे मात्र एक आर्थिक उत्तरदायित्व माना गया। मनु ने तो यहां तक कहा कि हिन्दू महिला आजीवन पुरुष पर निर्भर है बचपन में पिता पर, विवाहोपरान्त पति पर तथा वृद्धावस्था में पुत्र पर। इनमें से एक भी अवस्था में पुरुष का आश्रय न रहने पर उसे कलंकित व उपेक्षित किया गया तथा उसके जीवन को अपमान व तिरस्कार की ज्वाला में जला दिया गया। केवल भारत में ही नहीं बल्कि विदेशों में भी महिलाओं को अपमान व तिरस्कार से जूझना पड़ रहा है।

यद्यपि मानव समाज महिला व पुरुष, दोनों की सम्मिलित रचना है व समाज के ढांचे को सवारने में दोनों का महत्वपूर्ण योगदान है। तथापि, केवल जैविक आधार पर अंतर होने के कारण महिलाओं को अत्यंत निकृष्ट माना गया है। मैकबेथ में स्पष्ट कहा गया है की पुत्र को जन्म देने वाली महिलाएँ ही सम्मान पात्र है। इजराइल में भी परिवार पुत्र के बिना अधूरा माना जाता है, चीन में भी महिलाएं पुत्री को जन्म देने से अधिक अच्छा आत्महत्या करना उचित समझती है। इसके अतिरिक्त जापान, थाईलैंड आदि कई देशों में तलाक का सबसे प्रमुख कारण पुत्र का जन्म न होना अथवा पुत्री का जन्म पाया गया है।

केवल कुछ मातृ सत्तात्मक समाजों में ही महिलाएँ पुरुषों की भाँति समान सामाजिक स्थिति की भागीदारी होती हैं तथा स्वतंत्रता पूर्वक उच्च सांस्कृतिक मानों को प्रभावित करती है। किन्तु उसकी संख्या बहुत ही कम होने के कारण ये आस-पास के पुरुष प्रधान समाज से अत्यधिक प्रभावित हो गई है। यदि हम भारतीय महिलाओं की स्थिति पर भिन्न भिन्न कालों के आधार पर ध्यान दें तो पाएंगे की वैदिक काल में नारी प्रत्येक पग पर पुरुष की सहगामिनी हुआ करती थी उसे शिक्षा प्राप्त करने व वेद पढ़ने का अधिकार प्राप्त था।

प्रश्न - 9 (क) नवउदारवादी विचारधारा

(ख) सर्वहारा वर्ग की तानाशाही

उ० 9 (क) नवउदारवादी विचारधारा - नवउदारवाद एक राजनीतिक और आर्थिक नीति मॉडल है जो सरकार से निजी क्षेत्र मे आर्थिक कारकों के नियंत्रण को स्थानांतरित करने की मांग करते हुए मुक्त बाजार पूंजीवाद के मूल्य पर जोर देता है। इसके अलावा निजीकरण, वैश्वीकरण और मुक्त व्यापार की नीतियों को शामिल करता है।

नवउदारवाद शब्द पहली बार 1938 मे पेरिस मे प्रसिद्ध अर्थशास्त्रियों के सम्मेलन मे गढ़ा गया था समूह जिसमे वाल्टर लीपमैन फ्रेडरिक हेक और लुडविग वॉन मिज़ शामिल थे, ने "मूल्य तंत्र की प्राथमिकता मुक्त उद्यम प्रतिस्पर्धा की प्रणाली और एक मजबूत और निष्पक्ष राज्य पर जोर के रूप मे नवउदारवाद को परिभाषित किया। दोनो को नाज़ी नियंत्रित आस्ट्रीया से निर्वासित होने के बाद लुडविग वॉन मिजस और फ्रेडरिक हयेक ने सामाजिक लोकतंत्र को देखा जैसा की अमेरिकी राष्ट्रपति रोजगार्डन की भारी सरकार द्वारा विनियमित और ग्रेट ब्रिटेन के पोस्ट वर्ल्ड वार - 2 कल्याणकारी राज्य के उदय के रूप मे अभिव्यक्त किया गया। उत्पादन और धन का सामूहिक स्वामित्व मार्क्सवाद और साम्यवाद के रूप मे एक ही सामाजिक आर्थिक स्पेक्ट्रम पर कब्जा कर रहा है।

Topic _____ Date _____ Page No. _____

नवउदारवाद एक ऐसी विचारधारा नीति मॉडल है, जो मुक्त बाजार पर जोर देता है। यह मानव विकास को बढ़ावा देने के लिए आर्थिक विकास के रूप में सुविधित करता है। आर्थिक और सामाजिक मामलों में राज्य के न्यूनतम हस्तक्षेप पर जोर देता है।

नवउदारवाद प्रतिस्पर्धा को मानवीय संबंधों की परिभाषित विशेषता के रूप में देखता है। यह नागरिकों को उपभोक्ताओं के रूप में पुनः परिभाषित करता है। जिनके लोकतांत्रिक विकल्पों को खरीदने और बेचने का सबसे अच्छा प्रयोग किया जाता है। एक ऐसी प्रक्रिया जो योग्यता को पुरस्कृत करती है और अक्षमता को दंडित करती है। यह कहता है की बाजार ऐसे लाभ प्रदान करता है जो योजना बनाकर कभी हासिल नहीं किए जा सकते। प्रतिस्पर्धा को सीमित करने के प्रयासों को स्वतंत्रता के विरुद्ध माना जाता है। कर और नियमन को कम से कम किया जाना चाहिए सार्वजनिक सेवाओं का निजीकरण किया जाना चाहिए। ट्रेड यूनियनों द्वारा श्रम के संगठन और सामूहिक सौदेबाजी को बाजार की विकृतियों के रूप में चित्रित किया जाता है। जो विजेताओं और हारने वालों के एक प्राकृतिक पदानुक्रम को गठन में बाधा उत्पन्न करते हैं। उपयोगिता के लिए पुरस्कार और दंड का एक जनरेटर जो सभी को समूह करने के लिए चुना जाता है। बाजार सुनिश्चित करता है की सभी को वह मिले जिसके वे हकदार हैं।

(ख) सर्वहारा वर्ग की तानाशाही

सर्वहारा वर्ग की तानाशाही की अवधारणा कार्ल मार्क्स के साथ उत्पन्न हुई और व्लादिमिर लेनिन द्वारा रूसी क्रांति के बाद कम्युनिस्ट राज्य के संघटनात्मक सिद्धांत के रूप में लागू की गई। 1945 के बाद सोवियत अधिग्रहण के बाद, जोसेफ स्टालिन ने बाद में इसे पूर्वी यूरोप में श्रमिक राज्यों को संगठित करने के लिए अपनाया। चीन में माओ जेडांग ने दावा किया की 1949 की कम्युनिस्ट क्रांति सर्वहारा तानाशाही स्थापित करने का पहला कदम था। भले ही किसान काफी हद तक जिम्मेदार थे क्रांति की सफलता के लिए उनका कम्युनिस्ट मैनिफेस्टो 1848 में मार्क्स ने मजदूर वर्ग के नाम पर पूर्ण अधिकार स्थापित करने का तर्क दिया। मजदूर क्रांति के मार्ग पर पहला कदम सर्वहारा वर्ग को शासक वर्ग की स्थिति में ऊपर उठाना है। सर्वहारा वर्ग धीरे-धीरे बुर्जुवा वर्ग से सारी पूंजी छीनकर राज्य के हाथों में उत्पादन के सभी साधनों को केंद्रीकृत करके यानी सर्वहारा वर्ग के हाथों में शासक वर्ग के रूप में संगठित करके अपने राजनीतिक प्रभुत्व से हासिल कर लेगा।

"गोथा कार्यक्रम" की आलोचना में 1875 उन्होंने यह सिद्धांत दिया की कैसे पूंजीवाद और साम्यवादी समाज के बीच एक के दूसरे में क्रांतिकारी परिवर्तन की अवधि होती है उसके साथ एक राजनीतिक संक्रमण काल भी होता है। जिसमे

जिसमें राज्य सर्वहारा वर्ग की क्रांतिकारी तानाशाही के अलावा कुछ भी नहीं हो सकता है। तब मार्क्स ने इस शब्द को एक व्यक्ति द्वारा नहीं बल्कि एक संपूर्ण सामाजिक आर्थिक वर्ग द्वारा एक निरंकुश शासन के रूप में नियोजित किया। यदि पूंजीवाद पूंजीपति वर्ग की तानाशाही का गठन करता है तो इसे समाजवाद द्वारा प्रतिस्थापित किया जाएगा। सर्वहारा वर्ग की तानाशाही लेनिन में समाजवादी तानाशाही का पालन साम्यवाद एक वर्ग हीन राज्यविहीन समाज द्वारा किया जाना था।

लेनिन ने राज्य और क्रांति में सर्वहारा अधिनायकत्व की नीति विकसित की। 1917 में सर्वहारा वर्ग को केवल एक निश्चित अवधि के लिए राज्य की आवश्यकता होती है। यह अंतिम लक्ष्य के रूप में राज्य का उन्मूलन नहीं है। जो हमें अराजकतावादियों से अलग करता है लेकिन हम इस बात पर जोर देते हैं कि इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि शोषकों के खिलाफ अस्थायी रूप से राजनीतिक शक्ति के साधनों द्वारा और प्रक्रियाओं का उसी तरह उपयोग करें जैसे की वर्गों को खत्म करने के लिए उत्पीड़ित वर्ग की तानाशाही को भड़काने के लिए आवश्यक है।

प्रश्न -10 (क) व्यक्तिवाद

(ख) अलगाववाद

उ० 10 (क) व्यक्तिवाद :- आजका जीवन जो शहरों और नगरो मे समाया हुआ है। वस्तुतः भारत का वास्तविक जीवन नहीं कहा जा सकता। कोलाहल और आपाधापी से युक्त, व्यक्तिगत सोचो, क्षमताओ पर आधारित इसे हम व्यक्तिवादी जीवन की संज्ञा दे सकते है। सड़को पर रिक्शो साइकलो और पब्लिक वाहनों के सहारे घूमते जीवन यापन करते लोगो को अवश्य ही हम उपरोक्त श्रेणी मे नही रखना चाहते किन्तु शहरों और नगरो मे नित्य प्रतिदिन बढ़ती हुई जनसंख्या, विशेषकर उच्च मध्यम वर्ग की, इस बात का संकेत नही देती कि वे परिवारवाद और समाजवाद की सैद्धांतिक स्थापनाओं और व्यवहारिक परिणतियों से उनकी अंतिम सीमाओं तक जुड़ी है। उनके क्रियाकलाप व्यक्तिवादी सोचो से प्रभावित दिखते है।

यह दृष्टिकोण उन्नीसवीं सदी की उस विचारधारा का परिणाम दिखाई पड़ता है, जिसने औद्योगिक विस्तारिकरण और उससे उत्पन्न वर्गभेद, बढ़ती जन आकांक्षाएँ, प्रतियोगिता की तीव्र भावनाओं की बलिवेदी पर चढ़ती हुई सामाजिक सोच और संरचनाओं को तीव्र गति से प्रभावित किया गया है। मध्यम वर्ग जो सदैव से एक चिन्तक वर्ग रहा है, इसके परिणामों का समीप अथवा दूर से अध्ययन करता है, इसके

Topic ______ Date ______ Page No. ______

कुपरिणामों से समाज को अवगत कराने के प्रयासों में आध्यात्मिक चिंतक और मानव मूल्यों की ओर ध्यान आकृष्ट करने की तरह तरह की कोशिशें की। सत्साहित्य की रचनाओं से सम्पूर्ण पाश्चात्य और भारतीय संस्कृति भरी पड़ी है। रोमांटिसिज्म और भारतीय छायावाद को इस संदर्भ में देखने की कोशिश हम कर सकते हैं।

यह व्यक्तिवादी विचारधारा पश्चिमी औद्योगिकरण की चरम क्रमागत परिणति तो है जिसने धीरे-2 वर्ग भेद और जन भेद विशिष्ट और सामान्य के रूप में समाज की सम्पूर्ण स्वरूप को ही बदल डाला, सत्रहवीं शताब्दी में ही सामाजिक समझौते के सिद्धांत ने समाज को मानव के लिए आवश्यक मानते हुए भी गौण और व्यक्ति को प्रधान माना गया है।

परिणामस्वरूप, हर व्यक्ति भौतिक, सामाजिक और पारिवारिक स्तर पर अकेला होता जा रहा है। इस अकेलेपन को दूर करने की कोई दवा उसके पास नहीं है। कोई विपरीत विचारधारा उसके पास भी नहीं आ सकती। लोग अस्थिर हो चुके हैं। भारत की आत्मा अभी भी उन अविकसित और अर्धविकसित ग्राम्य अथवा अर्धशहरी वातावरण में निवास करती है, जहाँ वे व्यक्तिवादी सोचों से न तो भाग सकते हैं और न ही पारिवारिक, सामाजिक दायित्वों की अनदेखी कर सकते हैं।

(ख) अलगाववाद :- सामान्यता अलगाव से तात्पर्य एक किसी स्थिती से है जिससे व्यक्ति अपने घर परिवार तथा समाज के प्रति उदासीन हो जाता है तथा सामाजिक संबंधो के जाल मे वह स्वयं को मुक्त कराने का प्रयास करता है। अलगाव शब्द अंग्रेजी शब्द (एलिअनेशन) (Alienation) का हिन्दी रूपान्तर है। इसे अनेक उपनाओ के साथ जाना जाता है, यथा - मनमुटाव, विरसता, विरसज आदि। प्रारंभ मे अलगाव शब्द का प्रयोग पागल व्यक्ति के लिए किया जाता था लेकिन बाद मे अपने प्रति विरह या प्रथक भाव के लिए अलगाव शब्द का प्रयोग किया जाने लगा मार्क्स ने अपने अलगाव सिद्धांत की व्याख्या भौतिक जगत के संबंध मे रखी, जिसने समाजशास्त्री अवधारणाओ मे महत्वपूर्ण योगदान दिया। कार्ल मार्क्स के अनुसार "अलगाव व्यक्ति की वह दशा है जिसमें उसके अपने कार्य पराई शक्ति बन जाते है, जो उसके द्वारा शासित न होकर उससे ऊंचा होकर उसके विरुद्ध है।

अलगाव का स्वरूप - मार्क्स ने 1844 ई० मे अपनी कृति (Economical Manuscript) मे अलगाव से संबंधित अपने विचार व्यक्त किए जिसे मैसजारोस ने (Marx Theory of Alienation) मे संक्षिप्त रूप से प्रस्तुत किया है। मैसजारोस ने मार्क्स के अलगाव संबंधी विचारो को चार प्रमुख पक्ष बताये, जिनका विवरण अग्रांकित है।

Topic ______ Date ______ Page No. ______

(1) उत्पादित वस्तुओं के प्रति अलगाव -: मेसजारोस लिखते है की - मार्क्स का कहना है कि मजदूर जानता है जो कुछ वह उत्पादन करता है वह उसका नही है। इसका परिणाम यह होता है कि श्रमिक मे उत्पादन के प्रति अलगाव की भावना पैदा हो जाती है। श्रमिक का वस्तु की क्रय - विक्रय संबंधी प्रक्रिया पर कोई नियंत्रण नहीं होता। इसी कारण अलगाव की भावना उत्पन्न होती है।

(२) मार्क्स के अलगाव का दूसरा स्वरूप -: व्यक्ति को अपने स्वयं के प्रति अलगाव की भावना बताया है। उनका कहना है की पूँजीपति व्यवस्था मे श्रम विभाजन के कारण श्रमिक उत्पादन क्रिया मे एक छोटा सा हिस्सा होता है। पूँजीपति व्यवस्था मे श्रम मानवीय क्रिया न रहकर जीविकोपार्जन को बनाये रखने का साधन मात्र रह जाता है। श्रमिक की कार्य संबंधी स्वतंत्रता समाप्त हो जाती है जो अलगाव पैदा करता है।

(3) मानवजाती से अलगाव -: श्रमिक को समाज में रहकर अपने अस्तित्व के लिए आवश्यक परिस्थिती का सामना करना पड़ता है। पूँजीवादी व्यवस्था मे उसको इतनी अरुचि पैदा हो जाती है कि वह स्वयं से नही बल्कि अपने परिवार के सदस्यों से भी अलगाव अनुभव करने लगता है।

(4) व्यक्ति से व्यक्ति का अलगाव -: अलगाव का चौथा स्वरूप जो मार्क्स ने बताया वह तीसरे प्रकार के स्वरूप का ही निर्णय मात्र है। मार्क्स के अनुसार जब व्यक्ति अपने प्राकृतिक एवं सामाजिक लक्षणों से अलग - थलग पड़ जाता है तब प्रत्येक व्यक्ति समाज के अन्य व्यक्तियों से भी अलगाव की स्थिती मे आ जाता है।